क्या जानवर व्यक्ति होते हैं?

डी. बालसुब्रमण्यम

यह एक समीक्षा की समीक्षा है। पेशे से वकील और अदालत में जानवरों की वकालत करने के विशेषज्ञ श्री स्टीवन एम वाईज़ ने *रैटलिंग द केज : टुवर्ड्स लीगल राईट्स फॉर एनीमल्स* नामक एक किताब लिखी है। हालांकि यह किताब मुझे अभी पढ़ना बाकी है लेकिन 17 अगस्त, 2000 को *नेचर* पत्रिका के एक अंक में प्रकाशित हुई श्री केनन मलिक की इस किताब पर लिखी समीक्षा पढ़ने को मिली। इस समीक्षा में जानवरों के 'कानूनी अधिकारों' जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर चर्चा की गई है। इस संदर्भ में हमारे देश में चल रहे विवाद में कुछ स्पष्टता लाने के लिए इस समीक्षा में उठाए गए कुछ बिन्दुओं पर विचार करना प्रासंगिक होगा।

अपनी इस किताब में चिम्पैंज़ियों और बोनोबो बन्दरों के साथ महज़ 'वस्तुओं' की तरह नहीं, बल्कि 'मनुष्यों' की तरह व्यवहार करने के बारे में वाईज़ एक कानूनी बहस छेड़ते हैं ताकि अधिकारों के सम्भावित हकदार के रूप में उन पर विचार किया जा सके। उनका मानना है कि ऐसा करते समय हम 'राष्ट्रों के कानून' की बजाय 'प्रकृति के नियमों' का अनुसरण कर रहे होंगे। 'राष्ट्रों के कानून' मानव निर्मित होने से देश काल के संदर्भ में बदल भी सकते हैं। जबकि 'प्रकृति का नियम' सार्वभौमिक है। वह वस्तुओं के स्वभाव में निहित है और कोई एक प्रजाति उसे थोड़े समय के लिए या मनमाने ढंग से बदल नहीं सकती। वाईज़ के अनुसार जानवरों को कानूनी अधिकार नहीं देते समय (जैसे हम मनुष्यों को देते हैं) हम प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन कर रहे होते हैं। इसलिए जानवरों के अधिकारों को नकारना नस्लवाद व दास प्रथा के बतौर लिया जाएगा जो प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध जाने पर भी एक समय में मानव कानून में स्वीकार्य थे। दूसरे शब्दों में वे पूछते हैं कि ''क्या वस्तुएं या प्राणी या विचार इसलिए मूल्यवान होते हैं क्योंकि हम उन्हें मूल्यवान समझते हैं या वे स्वाभाविक रूप से मूल्यवान होते हैं।''

बन्दरों में बोध

ये वे तर्क हैं जिन्हें केनन मलिक अपनी समीक्षा में गलत सिद्ध करने का प्रयास करते हैं। वे कहते हैं कि दास प्रथा व नस्लवाद को निकाल बाहर फेंका गया क्योंकि वे मानवीय नैतिकी सम्बंधी विचारों के विरोधी थे। दास प्रथा व नस्लवाद इस विचार के चलते व्यवहार में लाए जा सके कि कुछ लोग दूसरे मनुष्यों से स्वाभाविक रूप से अधिक मूल्यवान या बेहतर होते हैं। इस तरह का विचार केवल राजनैतिक असमानता के अपराध में प्रकृति को अपना संगी बनाने का एक प्रयास था। मलिक यह नहीं सुझा रहे हैं कि दास प्रथा या नस्लवाद प्रकृति के नियम

अधिकार पाने का अर्थ यही है कि अपने व्यवहार की ज़िम्मेदारी भी ओढ़ लेना ताकि हम नैतिक प्राणी की तरह पहचाने जा सकें। अधिकार दिया जाना और अपने कार्यों के लिए जवाबदेह न ठहराया जाना कैसे स्वीकार्य हो सकता है? इसी तरह अधिकार न मिलना और अपने कार्यों के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जाना भी कैसे स्वीकार्य हो सकता है?